9359 - इबादत में रियाकारी का प्रवेश करना

प्रश्न

क्या मनुष्य को ऐसे कार्य का सवाब (प्रतिफल) प्राप्त होगा जिसमें रियाकारी (दिखावा और पाखंड) पाई जाती हो, फिर कार्य के दौरान नीयत (इरादा) बदल कर विशुद्ध अल्लाह के लिए हो जाए?

उदाहरण के तौर पर मैं क़ुरआन मजीद की तिलावत से फारिग हुआ और मेरे अंदर रियाकारी (दिखावा) का तत्व प्रवेश कर गया, लेकिन अगर मैं ने अल्लाह के बारे में सोचकर इस सोच का विरोध कर लिया तो क्या इस तिलावत पर मुझे सवाब मिलेगा, या कि रियाकारी के कारण यह नष्ट हो जाएगा? यहाँ तक कि अगरचे रियाकारी कार्य के समाप्त होने के बाद आई है ?

विस्तृत उत्तर

शैख इब्ने उसैमीन रहिमहुल्लाहु तआला कहते हैं कि :

इबादत में रियाकारी (दिखावा) के तत्व के सम्मिलित होने के तीन रूप हैं :

प्रथम रूप :

मूल रूप से उस इबादत को करने का कारण लेगों को दिखलाना हो ; जैसे कि कोई व्यक्ति लोगों को दिखाने के लिए नमाज़ अदा करने के लिए खड़ा हो, ताकि लोग उसकी नमाज़ पर उसकी प्रशंसा करें, तो यह रियाकारी इबादत को बर्बाद कर देती है।

दूसरा रूप :

इबादत के करने के दौरान उसमें रियाकारी (दिखावा) सम्मिलित हो जाए, अर्थात् : उस इबादत को करने का कारण उसके आरंभ में तो विशुद्ध रूप से अल्लाह तआला के लिए हो, फिर इबादत के दौरान उस में रियाकारी सम्मिलित हो गई, तो उसकी यह इबादत दो स्थितियों से खाली नहीं है :

पहली स्थिति :

इबादत का प्रथम भाग उसके अंतिम भाग से जुड़ा हुआ न हो, तो ऐसी स्थिति में उसका प्रथम भाग हर हालत में सही है, और उसका आखिरी भाग बातिल (अमान्य और व्यर्थ) है।

इस का उदाहरण यह है कि : एक मनुष्य के पास सौ रियाल हैं जिन्हें वह दान में देना चाहिता है, तो उसने पचास रियाल खालिस अल्लाह की प्रसन्नता प्राप्त करने के लिए दान किए, फिर बाक़ी पचास रियालों में उसके अंदर रियाकारी आ गयी। तो पहले पचास

रियाल का दान तो सही और स्वीकार्य दान है, और शेष पचास रियालों का दान, निःस्वार्थता में रियाकारी (दिखावा) के मिल जाने के कारण एक व्यर्थ और अमान्य दान है।

दूसरी स्थिति :

यह है कि इबादत का प्रारंभिक भाग उसके अंतिम भाग से संबद्ध हो, तो ऐसी स्थिति में इन्सान दो बातों से खाली नहीं हो गा :

पहली बात : वह रियाकारी को दूर करने और उससे बचाव का प्रयास करता है, और उस पर वह शांत और संतुष्ट नहीं होता है, बल्कि वह उससे उपेक्षा करता है और उसे नापसंद करता है : तो इसका कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ेगा, क्योंकि अल्लाह के नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का फरमान है :

“निःसंदेह अल्लाह तआला ने मेरी उम्मत से उनके दिलों में पैदा होने वाली कल्पनाओं को क्षमा कर दिया है जब तक कि वह उस पर अमल न करे, या बात न करे।”

दूसरी बात : वह इस रियाकारी पर सन्तुष्ट हो और वह उसे दूर न करे : तो ऐसी अवस्था में उसकी सारी इबादत बातिल (व्यर्थ) हो जाए गी, क्योंकि उसका पहला भाग उसके अंतिम भाग के साथ संबद्ध है।

इसका उदाहरण यह है कि : वह विशुद्ध रूप से अल्लाह के लिए नमाज़ का आरंभ करे, फिर दूसरी रकअत में उस पर रियाकारी दाखिल हो जाए, तो पूरी नमाज़ बातिल हो जाएगी, क्योंकि उसका पहला भाग उसके अंतिम भाग से जुड़ा हुआ है।

तीसरा रूप :

यह है कि इबादत समाप्त हो जाने के बाद रियाकारी पैदा हो : तो ऐसी स्थिति में उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा, और न ही वह (इबादत) बातिल (व्यर्थ) होगी ; क्योंकि वह इबादत सही प्रकार से पूरी हुई है, तो उसके समाप्त हो जाने के बाद पैदा होने वाली रियाकारी के कारण वह फासिद (खराब) नहीं होगी।

तथा आदमी का लोगों के उसकी इबादत को जान लेने पर खुश होना, रियाकारी में सम्मिलित नहीं है ; क्योंकि यह इबादत से फारिग होने के बाद पैदा हई है।

इसी तरह यह भी रियाकारी नहीं है कि मनुष्य आज्ञाकारिता का कार्य करने पर प्रसन्न हो, क्योंकि यह तो उसके ईमान की दलील है।

अल्लाह के पैगंबर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का फरमान है कि : “जिसे उसकी नेकी प्रसन्न कर दे और उसकी बुराई अप्रसन्न कर दे, तो वही मोमिन है।”

तथा नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से इस विषय में प्रश्न किया गया तो आप ने फरमाया : “यह मोमिन को शीघ्र (यानी दुनया में ही) मिलने वाली शुभसूचना है।”

''मजमूओ फतावा अश-शैख़ इब्ने उसैमीन (2/29, 30)